"आहत सिक्कों का ऐतिहासिक महत्व (स्वरूप एवं निर्माण विधि के विशेष संदर्भ में)"

Sarvesh Singh,
Department of ancient history , culture and archeology . University of Allahabad

प्राचीनतम् भारतीय सिक्कों को पंचमार्क या आहत सिक्कों की संज्ञा दी जाती है। पुरासाहित्य में धरण शब्द तथा कालान्तर में कार्षापण नाम से भी इनका संज्ञापन होता है। ये सिक्के चांदी की धातु से निर्मित किये जाते थे। पाणिनि की अष्टाध्यायी सूत्र के अनुसार उनके काल में सिक्के आहत करके बनाये जाते थे। 'सर्वप्रथम मुद्राशास्त्रियों में इन्हें विमर्श का विवरण तब बनाया गया, जब 1800 ई0 के आस–पास काल्डवेल को दक्षिण भारत के कोयम्बटूर जिले के एक स्तूप में तीन अत्यन्त पुराने और घृष्ट रजत सिक्कों के नमूने प्राप्त हुए।[1] अर्थशास्त्र से इन सिक्कों की निर्माण प्रक्रिया पर प्रकाश पड़ता है एवं सिक्का बनाने में प्रयुक्त उपकरणों का उल्लेख है। इन उपकरणों में लौह अर्थात धातु, पात्र, क्षार, अंगार, अधिकरणी, मुष्टीक (हथौड़ा), भस्त्र तथा बिम्बटक आदि प्रमुख हैं। इन्हीं के आधार पर अनुमान किया गया है कि, धातु को सबसे पहले पात्र में रखकर अंगार पर जलाया जाता था, फिर क्षार से साफ किया जाता था। पुनः धातु को निहाई पर रखकर इसे पीटकर चादर बनाकर कर्तनी से छोटे–छोटे टुकड़े बनाये जाते थे। टुकड़ों को बिम्बटन आहत कर सिक्कों का रूप दिया जाता था। धातु टुकड़ों को काट–छांट कर समुचित तौल का बनाया जाता था, इसलिए इनमें एकरूपता नहीं दिखाई पड़ती।

साहित्यिक प्रसंगों के आधार पर कुछ उत्साही विद्वान कहते हैं कि वैदिक युग में सिक्कों का प्रचलन था। सोने के कंठे के रूप में निष्क की चर्चा उपहार के प्रसंगों में पाई जाती है, लेकिन इसमें बहुत संदेह है कि वैदिक युग में इसकी बिक्री और खरीद होती थी।[2] तात्पर्य यह है कि आहत सिक्के ही भारत के प्राचीनतम सिक्के हैं।

आहत सिक्के मुख्यतः त्रिकोण, चतुष्कोण, पंचकोण, षटकोण, गोल तथा अण्डाकार आदि अनेक प्रकार के पाये जाते हैं। इन सिक्कों पर अलग–अलग बिम्ब टंकों से एक से पाँच तक लांछन पाये जाते हैं। निर्माण तकनीकि के कारण इन्हें आहत सिक्का कह दिया गया। इस काल के

कुछ सिक्के एक अन्य पद्धति से भी निर्मित किये गये हैं। सर्वप्रथम धातु को गलाकर समतल भूमि पर फैला दिया जाता था। धातु को आकार लेने के बाद एवं जमने के पूर्व दबाकर बिंब अंकित कर दिया जाता था। इस पद्धति से बनाये गये सिक्के कुछ सीमित क्षेत्र से मिले हैं। तकनीकी दृष्टि से इन्हें आहत सिक्कों की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। कुछ साम्य के कारण इनकी चर्चा आहत मुद्राओं के साथ की जा सकती है।

'चिन्हित सिक्के कई प्रकार के मिलते हैं– लम्बा, चपटा, चतुर्भुज, चौकोर, गोलाकार, पंच या षटकोण सहित।'[3] आहत सिक्कों में पाये जाने वाले चिन्हों की संख्या बहुत अधिक है। जिनमें वृक्ष, पशु–पक्षी, कीट, मनुष्य, पुष्प, ज्यामितीय आकृतियाँ, धार्मिक चिन्ह आदि नाना प्रकार के बिम्ब मिलते हैं। बिम्बों की संख्या अधिक होने के बावजूद इन सिक्कों के टंकण में एक निश्चित संख्या व्यवस्थित है। प्रत्येक बिम्ब किसी क्षेत्र विशेष, वर्ग अथवा धातु सिक्कों से सम्बन्ध रखता है। बिम्बों को देखकर आहत सिक्कों के प्रसार क्षेत्र, राज्य और काल का सहज भाव से अनुमान लगाया जा सकता है। बौद्ध साहित्य से पता चलता है कि रूप परीक्षक सिक्के किस क्षेत्र, पर्वत, नगर और नदी से सम्बन्धित हैं।

इन बिम्बों का अभी तक समुचित विश्लेषणात्मक अध्ययन नहीं हुआ है। अनुमान यह है कि ये बिम्ब प्रचलित करने वाले व्यापारियों, निगमों एवं श्रेणियों के प्रतीक हैं। अन्य मुद्राशास्त्री इन बिम्बों को राजन्य, राज्य अथवा उसका प्रतीक टकसाल या नगर का संकेत अनुमानित करते हैं। प्रारम्भ में बिम्ब सिक्कों के चित् भाग पर अंकित किये जाते थे, पट भाग एकदम कोरा रहता था। कालान्तर में पट भाग पर भी बिम्ब टंकित किया जाने लगा, परन्तु पट की ओर के बिम्ब आकार की दृष्टि से चित की तुलना में अत्यन्त छोटे होते थे। किसी पर एक ही प्रकार के दो बिम्ब हैं तो किसी पे दस बारह। सिक्कों पर कोई बिम्ब एकदम ताजा तथा कोई–कोई घिसे हुये मिलते हैं। यद्यपि कतिपय विद्वान इन चिन्हों का सम्बन्ध धार्मिक पक्ष से मानते हैं, किन्तु धार्मिकता के विचार को पृथक नहीं किया जा सकता है।[4] अनुमान किया गया है कि बिम्ब लोक व्यवहार के दौरान समय–समय पर अंकित किये गये होंगे। जो सिक्के प्रचलन में अधिक रहे, उन पर चिन्हों की

संख्या अधिक है। बनावट एवं प्रचलन की दृष्टि से क्षेत्र विशेष में सीमित रहने वाले सिक्कों को स्थानीय आकृति मुद्रा एवं जनपदीय आहत मुद्रा नाम दिया गया है। आहत मुद्राओं के ठप्पों में लेख न होकर मात्र प्रतीक थे।[5]

आहत सिक्कों की बहुत बड़ी संख्या ऐसे सिक्कों की है, जिनका तौल एवं बिम्ब विधान एक सा है। ये सम्पूर्ण क्षेत्र में पूर्व में ढाका से लेकर पश्चिम में अफगानिस्तान, उत्तर में कोंकण घाटी से लेकर तिरूवनपल्ली तक बिखरे पाये गये हैं। सम्भवतः इस भाँति के सिक्के किसी ऐसी सत्ता द्वारा प्रचलित किये गये थे, जिनका सम्पूर्ण देश पर अधिकार अथवा प्रभाव था। मुद्राविदों ने ऐसे सिक्कों को सार्वदेशिक एवं साम्राज्यिक आहत मुद्रा नाम दिया। तथा इन्हें मगध के सुप्रसिद्ध सिक्कों के रूप में पहचाना गया है।

मगध के स्थानीय सिक्के विभिन्न भार मान के हैं। जब मगध का विकास हुआ तभी मगध के सिक्कों का भी विकास एवं विस्तार हुआ। इन्हें अर्थशास्त्र में लिखित पण अथवा कार्षापण के रूप में जाना जाता है। कनिंघम ने इन सिक्कों को मनुस्मृति में धारण, पुराण के रूप में पहचाना है, एवं इनका भार 32 रत्ती अथवा 57.6 ग्रेन अनुमानित किया है। वाल्स ने पण का मानक भार 58.6 ग्रेन माना। एच0एल0 गुप्त ने मगध के पर्ण का भार 32 रत्ती स्वीकार्य किया। कनिंघम ने 800 से अधिक सिक्कों को तौलकर औसत भार 47.8 ग्रेन निर्धारित किया। उपलब्ध तथ्यों के आलोक में मुद्राविदों का मत 54 ग्रेन सर्वाधिक स्वीकार्य है। उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर इनकी संख्या लगभग 500 है। इनमें नाना प्रकार की आकृतियाँ यथा– सूर्य, चक्र, मनुष्य, पशु, हाथी, बैल, कुत्ता, मृग, मछली, पर्वत, वृक्ष, मगरमच्छ, गैंड़ा, आदि के चिन्ह प्राप्त होते हैं। यदा–कदा एक बिम्ब दूसरे पर टंकित मिलता था, परन्तु प्रत्येक बिम्ब का कोई न कोई निश्चित अभिप्राय अवश्य रहा होगा। लांछन समूहों के समानता के आधार पर लगभग 400 लांछन समूह ज्ञात हुये हैं। पाँच सिक्कों की समानता के आधार पर वर्गीकृत लांछन समूहों को सिक्कों के भांति की संज्ञा देकर निम्न तथ्य स्पष्ट हैं–

1. आहत सिक्कों के 12, 13 के अतिरिक्त शेष सभी सिक्कों पर सूर्य बिम्ब समान रूप से मिलता है।
2. जिन सिक्कों पर सूर्य का बिम्ब मिलता है, उन सभी सिक्कों पर षडर चक्र भी मिलता है।
3. अधिकांशतः भाँति के सिक्कों पर समान रूप में मिलता है। इनकी संख्या 50 से अधिक है। इन पर पशु–पक्षी पर्वत आदि के चिन्ह अंकित हैं।
4. लांछन समूह पाँच बिम्बों में से 4 का उपयोग क्रम के बाद में, पाँच बिम्ब शेष रहता है, वह भाँति का प्रतीक कहा गया है।
5. लगभग एक दर्जन ऐसे सिक्के हैं, जिन पर तीन मानव आकृतियाँ मिलती हैं। कुछ पर वेदिकायुक्त वृक्ष भी अंकित है।

मगध की मुद्रा प्रणाली में चांदी के आहत सिक्के संभवतः पांच चिन्हों वाले थे। चांदी के नये सिक्के का तौल करीब 54 ग्रेन था। पूरा कार्षापण एक ऐसी तौल प्रणाली पर आधारित था, जिसका मूल सिंधु सभ्यता में तो मिलता है, परन्तु भारत के बाहर अन्यत्र कहीं नहीं।[6] मौर्यों के पतन के पश्चात चांदी के इन पणों का बनना बन्द हो गया, जिससे प्रथम शती ई0 तक आहत सिक्कों का प्रचलन लगभग बन्द हो गया। परवर्ती कालों में मुद्रायें ढाल कर तैयार की जाने लगीं, जो मथुरा, झूँसी, शिशुपालगढ़ आदि पुरास्थलों से प्राप्त हुयी हैं। मुद्राओं के विकास क्रम में तकनीकी और वैज्ञानिकता के विकास ने आमूल–चूल परिवर्तन किया। नई धातुओं का आविष्कार तथा धातुओं का परिष्करण भी पूर्व से और अधिक शुद्ध तथा त्रुटिरहित हो गया। निर्माण विधि एवं स्वरूप दोनों स्तरों पर व्यापक रूप से परिमार्जन हो गया, तथापि आहत सिक्के विनिमय के प्रथम प्रामाणिक माध्यम होने के साथ ही कालान्तर के मुद्राशास्त्र के विकास में चिरस्थायी प्रेरक भी सिद्ध हुये।

संदर्भ संकेत–

1. सिंह, आनन्द शंकर, भारत की प्राचीन मुद्राएं, 2008 शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ0 37
2. शर्मा, रामशरण, प्रारम्भिक भारत का आर्थिक और सामाजिक इतिहास, 1992, हि0मा0का0 निदे0, दिल्ली, वि0वि0, दिल्ली, पृ0 219
3. उपाध्याय, वासुदेव, प्राचीन भारतीय मुद्राएं, 1971, प्रज्ञा प्रकाशन, पटना, पृ0 52
4. वही, पृ0 51
5. गुप्त, परमेश्वरी लाल, प्राचीन भारतीय मुद्राएं, 1994, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ0 08

6. कोसांबी, दामोदर धर्मानंनद, प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता, 1990, राजकमल प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0 164

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. अग्रवाल, बी0एस0, ए नोट ऑन सम मिनिट सिल्वर पंचमार्क क्वायंस ऑफ रौप्य मास्क सिरीज, जे0एन0एस0आई0, भाग–13
2. मार्शल, जे0, आर्क्यालॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट्स (1911–30)
3. रैप्सन, ई0जे0, नोट्स ऑन इण्डियन क्वायंस एण्ड सील्स, जे0आर0 ए0एस0
4. वाल्टर, इलियट, न्यूमिस्मेटिक ग्लीनिंग्स।
5. दीक्षित, एम0,जी0, क्वायंस ऑफ त्रिपुरी एक्सवेशन।
6. गुप्ता, परमेश्वरी लाल, जे0एन0एस0आई0, भाग–2